बौद्ध शिक्षा दर्शन में प्रतीत्य समुत्पाद का सिद्धांत एवं उसका शैक्षिक महत्व

आशीष कुमार पाठक
शोध–छात्र, शिक्षा संकाय,
सनराइज विश्वविद्यालय, राजस्थान

सार

प्रस्तुत शोध पत्र में बौद्ध दर्शन के एक अत्यंत महत्वपूर्ण एवं केन्द्रीय सिद्धांत प्रतीत्य समुत्पाद (द्वादश निदान) का दार्शनिक तथा शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया गया है। बौद्ध दर्शन के अनुसार संसार की प्रत्येक वस्तु एवं घटना कारणदृकार्य संबंध पर आधारित होती है और कोई भी तत्व स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में नहीं होता। यह सिद्धांत जीवन के यथार्थ स्वरूप को स्पष्ट करते हुए यह प्रतिपादित करता है कि मानव जीवन में विद्यमान दुःखों का मूल कारण अज्ञान (अविद्या) एवं तृष्णा है।

इस शोध पत्र में प्रतीत्य समुत्पाद की बारह कड़ियों अविद्या, संस्कार, विज्ञान, नामरूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव, जाति तथा जरामरणकृका क्रमबद्ध एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसके माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार ये कड़ियाँ परस्पर संबद्ध होकर जन्मदृमरण के चक्र (भवचक्र) को संचालित करती हैं तथा मानव को दुःख के बंधन में रखती हैं। इसके अतिरिक्त, शोध पत्र में इस सिद्धांत के दार्शनिक महत्व का विवेचन करते हुए यह दर्शाया गया है कि यह शाश्वतवाद एवं उच्छेदवाद दोनों का खंडन कर मध्यम मार्ग का प्रतिपादन करता है तथा आगे चलकर शून्यवाद के विकास का आधार बनता है।

शैक्षिक दृष्टिकोण से प्रतीत्य समुत्पाद का विशेष महत्व है। यह सिद्धांत शिक्षा को तार्किकता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं कारणदृपरिणाम की समझ प्रदान करता है। साथ ही यह विद्यार्थियों में आत्मविश्लेषण, नैतिकता, उत्तरदायित्व तथा कर्मप्रधान जीवन–दृष्टि का विकास करता है। इस प्रकार यह शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन तक सीमित न रखकर उसे जीवनोपयोगी, मूल्यपरक एवं व्यवहारिक बनाता है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रतीत्य समुत्पाद न केवल बौद्ध दर्शन का मूल आधार है, बल्कि आधुनिक शिक्षा में भी इसकी प्रासंगिकता अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह मानव जीवन को यथार्थ, नैतिक एवं संतुलित दृष्टि प्रदान करता है।

मुख्य शब्द– बौद्ध दर्शन, प्रतीत्य समुत्पाद, द्वादश निदान, शिक्षा, नैतिकता, कर्म

प्रस्तावना

शिक्षा और दर्शन का परस्पर गहरा एवं अविच्छिन्न संबंध है। किसी भी समाज की शिक्षा–व्यवस्था उसके दार्शनिक आधारों, सांस्कृतिक मूल्यों तथा जीवन–दृष्टि पर निर्मित होती है। दर्शन जहाँ जीवन के अंतिम सत्य, उद्देश्य एवं मूल्यों का अन्वेषण करता है, वहीं शिक्षा उन आदर्शों को व्यवहार में रूपांतरित करने का माध्यम है। इस प्रकार शिक्षा, दर्शन की व्यावहारिक अभिव्यक्ति के रूप में कार्य करती है।

भारतीय चिंतन परंपरा में बौद्ध दर्शन एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह दर्शन न केवल आध्यात्मिक एवं दार्शनिक दृष्टि से समृद्ध है, बल्कि इसका दृष्टिकोण अत्यंत व्यावहारिक, मानवीय एवं यथार्थवादी भी है। महात्मा बुद्ध ने मानव जीवन के दुःखों का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए उनके कारणों एवं निवारण का वैज्ञानिक एवं तर्कसंगत मार्ग प्रस्तुत किया। उन्होंने जीवन को किसी दैवी या अलौकिक शक्ति पर निर्भर न मानकर, उसे कारणदृकार्य संबंधों की श्रृंखला के रूप में समझाया।

इसी संदर्भ में प्रतीत्य समुत्पाद का सिद्धांत बौद्ध दर्शन का केन्द्रीय तत्व है। यह सिद्धांत प्रतिपादित करता है कि संसार की प्रत्येक वस्तु एवं घटना विभिन्न कारणों एवं परिस्थितियों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती है। कोई भी तत्व स्वतंत्र या स्वायत्त रूप से अस्तित्व में नहीं होता। इस प्रकार यह

सिद्धांत जीवन के यथार्थ स्वरूप को स्पष्ट करते हुए यह दर्शाता है कि मानव जीवन में विद्यमान दुःख अज्ञान (अविद्या) और तृष्णा के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं।

प्रतीत्य समुत्पाद के माध्यम से बुद्ध ने यह भी स्पष्ट किया कि यदि दुःख के कारणों को समझकर उनका निराकरण किया जाए, तो दुःख से मुक्ति संभव है। यह सिद्धांत न केवल दार्शनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि शैक्षिक दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी है, क्योंकि यह व्यक्ति को तार्किक, विवेकपूर्ण एवं उत्तरदायी जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करता है।

अतः प्रस्तुत शोध पत्र में प्रतीत्य समुत्पाद के सिद्धांत का दार्शनिक एवं शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया गया है, जिससे इसके व्यावहारिक महत्व एवं आधुनिक शिक्षा में इसकी प्रासंगिकता को समझा जा सके।

प्रतीत्य समुत्पाद का दार्शनिक स्वरूप

बौद्ध दर्शन में प्रतीत्य समुत्पाद (क्मचमदकमदज व्तपहपदंजपवद) का सिद्धांत अत्यंत केंद्रीय एवं मूलभूत स्थान रखता है। 'प्रतीत्य' का अर्थ हैकृ प्रत्ययों (कारणों) पर निर्भर होना तथा 'समुत्पाद' का अर्थ है उत्पत्ति या प्रादुर्भाव। इस प्रकार प्रतीत्य समुत्पाद का अभिप्राय है "कारणों एवं परिस्थितियों के आधार पर उत्पत्ति"।

इस सिद्धांत के अनुसार संसार की कोई भी वस्तु, घटना अथवा अवस्था स्वतः, स्वतंत्र या निरपेक्ष रूप से उत्पन्न नहीं होती, बल्कि वह विभिन्न कारणों एवं सहायक परिस्थितियों के संयोग से अस्तित्व में आती है। यह दृष्टिकोण समस्त अस्तित्व को एक परस्पर–निर्भर एवं गतिशील प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसमें प्रत्येक तत्व अन्य तत्वों से जुड़ा हुआ है।

प्रतीत्य समुत्पाद का यह सिद्धांत बौद्ध दर्शन की यथार्थवादी एवं वैज्ञानिक प्रवृत्ति को स्पष्ट करता है। यह न केवल संसार के स्वरूप को समझाने का प्रयास करता है, बल्कि मानव जीवन में दुःख के कारणों का भी तार्किक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके अनुसार अज्ञान (अविद्या) के कारण तृष्णा उत्पन्न होती है और तृष्णा के कारण दुःख की उत्पत्ति होती है।

दार्शनिक दृष्टि से यह सिद्धांत दो अतिवादी मान्यताओं का खंडन करता है–

शाश्वतवाद– यह मान्यता कि संसार या आत्मा का अस्तित्व स्थायी एवं अपरिवर्तनीय है। प्रतीत्य समुत्पाद इस विचार को अस्वीकार करता है, क्योंकि इसके अनुसार सभी वस्तुएँ कारणों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती हैं और परिवर्तनशील हैं।

उच्छेदवाद – यह धारणा कि मृत्यु के पश्चात सब कुछ पूर्णतः समाप्त हो जाता है और किसी प्रकार की निरंतरता नहीं रहती। बौद्ध दर्शन इस मत का भी खंडन करता है, क्योंकि कारण, कार्य संबंध के आधार पर अस्तित्व की एक निरंतर प्रक्रिया बनी रहती है।

इन दोनों अतिवादी दृष्टिकोणों के बीच मध्यम मार्ग का प्रतिपादन प्रतीत्य समुत्पाद के माध्यम से किया गया है। यह दृष्टिकोण संतुलित, यथार्थवादी और तर्कसंगत है, जो जीवन के सत्य को न तो पूर्णतः स्थायी मानता है और न ही पूर्णतः नश्वर।

आगे चलकर बौद्ध आचार्य नागार्जुन ने इसी सिद्धांत को आधार बनाकर शून्यवाद का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार जब सभी वस्तुएँ परस्पर निर्भर हैं और उनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है, तो वे स्वभावतः "शून्य" हैं। यहाँ 'शून्यता' का अर्थ शून्य या रिक्तता नहीं, बल्कि स्वतंत्र सत्ता के अभाव से है।

द्वादश निदान (प्रतीत्य समुत्पाद की बारह कड़ियाँ)

बौद्ध दर्शन में प्रतीत्य समुत्पाद के सिद्धांत को स्पष्ट करने के लिए इसे बारह परस्पर संबंधित कड़ियों या अवस्थाओं में प्रस्तुत किया गया है, जिन्हें द्वादश निदान कहा जाता है। ये कड़ियाँ मानव जीवन के जन्मदृमरण चक्र (भवचक्र) को स्पष्ट करती हैं तथा यह दर्शाती हैं कि किस प्रकार अज्ञान के कारण मनुष्य दुःख के बंधन में फँसा रहता है।

ये बारह कड़ियाँ निम्नलिखित हैं–

अविद्या, संस्कार, विज्ञान, नामरूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव, जाति एवं जरामरण।

इन सभी कड़ियों का संबंध कारणदृकार्य के रूप में एक–दूसरे से जुड़ा हुआ है, जहाँ प्रत्येक कड़ी अगली कड़ी को उत्पन्न करती है। इस प्रकार यह एक सतत प्रक्रिया का निर्माण करती है, जिसे भवचक्र कहा जाता है।

द्वादश निदानों का क्रमिक विश्लेषण

प्रथम कड़ी अविद्या है, जो वास्तविकता के अज्ञान को दर्शाती है। इसी अज्ञान के कारण व्यक्ति गलत धारणाओं एवं आसक्तियों में बँध जाता है। अविद्या के परिणामस्वरूप संस्कार उत्पन्न होते हैं, जो व्यक्ति के कर्मों एवं मानसिक प्रवृत्तियों का निर्माण करते हैं।

संस्कारों के प्रभाव से विज्ञान (चेतना) उत्पन्न होता है, जो जीवन के अनुभवों को ग्रहण करने की क्षमता प्रदान करता है। इसके पश्चात नामरूप का विकास होता है, जिसमें मानसिक एवं शारीरिक तत्वों का समन्वय होता है। नामरूप के आधार पर षडायतन अर्थात् छह इन्द्रियों का विकास होता है, जो बाह्य जगत के साथ संपर्क स्थापित करती हैं। इन्द्रियों और विषयों के संपर्क से स्पर्श उत्पन्न होता है, जिसके परिणामस्वरूप वेदना (सुख, दुःख या उदासीनता) की अनुभूति होती है।

वेदना के आधार पर तृष्णा उत्पन्न होती है, जो इच्छा एवं लालसा का रूप है। यही तृष्णा आगे उपादान (आसक्ति) में परिवर्तित होती है, जहाँ व्यक्ति किसी वस्तु, विचार या संबंध के प्रति गहरे मोह में बँध जाता है।

उपादान से भव उत्पन्न होता है, जो कर्मजनित अस्तित्व या जीवन की निरंतरता को दर्शाता है। भव के परिणामस्वरूप जाति (जन्म) होती है, और जन्म के साथ ही जरामरण (बुढ़ापा एवं मृत्यु) तथा उससे संबंधित शोक, दुःख एवं कष्ट उत्पन्न होते हैं।

भवचक्र का तात्पर्य

इन बारह कड़ियों का परस्पर संबंध यह स्पष्ट करता है कि मानव जीवन एक निरंतर चक्र है, जिसमें जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म का क्रम चलता रहता है। यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक अविद्या और तृष्णा का निवारण नहीं होता।

संक्षिप्त रूप में श्रृंखला

इस जटिल प्रक्रिया को संक्षेप में इस प्रकार समझा जा सकता है–

अविद्या ⟶ तृष्णा ⟶ उपादान ⟶ भव ⟶ जाति ⟶ दुःख (जरामरण)

यह श्रृंखला यह स्पष्ट करती है कि दुःख का मूल कारण अज्ञान और इच्छा है। यदि इन कारणों को समाप्त कर दिया जाए, तो दुःख का निवारण संभव है।

प्रतीत्य समुत्पाद का दार्शनिक महत्व

बौद्ध दर्शन में प्रतीत्य समुत्पाद का सिद्धांत न केवल सैद्धांतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह संपूर्ण बौद्ध दर्शन की आधारशिला के रूप में स्थापित होता है। यह सिद्धांत अस्तित्व, ज्ञान एवं जीवन के स्वरूप को समझने के लिए एक वैज्ञानिक एवं यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रदान करता है। इसके दार्शनिक महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **कारण–कार्य संबंध का वैज्ञानिक प्रतिपादन**
   प्रतीत्य समुत्पाद यह प्रतिपादित करता है कि संसार की प्रत्येक वस्तु एवं घटना किसी न किसी कारण पर आधारित होती है। कोई भी वस्तु स्वतः उत्पन्न नहीं होती। यह सिद्धांत प्राकृतिक नियमों की भाँति कार्य करता है, जहाँ प्रत्येक परिणाम के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य निहित होता है। इस प्रकार यह दर्शन जीवन को अंधविश्वास से हटाकर तार्किकता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण की ओर ले जाता है।
2. **स्वतंत्र सत्ता (ईश्वर–आत्मा) के अस्तित्व को चुनौती**
   यह सिद्धांत किसी भी स्वतंत्र, शाश्वत एवं स्वायत्त सत्ता जैसे ईश्वर या आत्माकृको स्वीकार नहीं करता। इसके अनुसार सभी वस्तुएँ परस्पर निर्भर हैं और उनका अस्तित्व अन्य कारणों पर आधारित है। इस प्रकार यह ईश्वरवाद एवं आत्मवाद दोनों की

परंपरागत धारणाओं को चुनौती देता है और एक नवीन दार्शनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

3. **शून्यवाद का आधार**

बौद्ध आचार्य नागार्जुन ने प्रतीत्य समुत्पाद के सिद्धांत को आधार बनाकर शून्यवाद का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार जब सभी वस्तुएँ परस्पर निर्भर हैं और उनका कोई स्वतंत्र स्वभाव (स्वभाव–शून्यता) नहीं है, तो वे 'शून्य' हैं। यहाँ शून्यता का अर्थ नकारात्मक रिक्तता नहीं, बल्कि स्वतंत्र सत्ता के अभाव से है। इस प्रकार प्रतीत्य समुत्पाद शून्यवाद की दार्शनिक पृष्ठभूमि तैयार करता है।

4. **यथार्थवादी एवं वैज्ञानिक जीवन–दृष्टि का विकास**

यह सिद्धांत जीवन को किसी रहस्यवादी या अलौकिक दृष्टि से नहीं, बल्कि यथार्थवादी एवं तर्कसंगत दृष्टिकोण से देखने की प्रेरणा देता है। यह मनुष्य को यह समझने में सहायता करता है कि उसके जीवन में घटित प्रत्येक घटना के पीछे कोई कारण होता है, जिसे समझकर वह अपने जीवन को बेहतर बना सकता है।

5. **मध्यम मार्ग का दार्शनिक आधार**

प्रतीत्य समुत्पाद शाश्वतवाद (सब कुछ स्थायी है) और उच्छेदवाद (सब कुछ नष्ट हो जाता है) दोनों का खंडन करता है। इस प्रकार यह संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जिसे मध्यम मार्ग कहा जाता है। यह दृ ष्टिकोण जीवन में संतुलन, संयम और विवेक की भावना को विकसित करता है।

6. **नैतिकता और उत्तरदायित्व का आधार**

चूँकि यह सिद्धांत कर्म और उसके परिणामों को महत्व देता है, इसलिए यह व्यक्ति को अपने कर्मों के प्रति सजग और उत्तरदायी बनाता है। यह विचार नैतिक जीवन के निर्माण में अत्यंत सहायक है, क्योंकि व्यक्ति यह समझता है कि उसके वर्तमान कार्य ही उसके भविष्य का निर्धारण करते हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रतीत्य समुत्पाद केवल एक दार्शनिक सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक जीवन–दृष्टि प्रदान करता है, जो मानव को तर्क, नैतिकता, संतुलन और यथार्थ के मार्ग पर अग्रसर करती है।

शैक्षिक महत्व

बौद्ध दर्शन का प्रतीत्य समुत्पाद सिद्धांत केवल दार्शनिक अवधारणा तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका शिक्षा के क्षेत्र में अत्यंत व्यापक एवं व्यावहारिक महत्व है। यह सिद्धांत शिक्षा को यथार्थवादी, तार्किक एवं जीवनोपयोगी दिशा प्रदान करता है। इसके प्रमुख शैक्षिक निहितार्थ निम्नलिखित हैं–

1. **तार्किक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास**

प्रतीत्य समुत्पाद यह स्पष्ट करता है कि प्रत्येक घटना किसी न किसी कारण पर आधारित होती है। इस प्रकार यह विद्यार्थियों में कारणदृपरिणाम संबंध को समझने की क्षमता विकसित करता है। इससे उनमें अंधविश्वास के स्थान पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं तार्किकता का विकास होता है।

2. **आत्मविश्लेषण एवं चिंतन क्षमता का विकास**

यह सिद्धांत विद्यार्थियों को अपने विचारों, भावनाओं एवं कार्यों का विश्लेषण करने के लिए प्रेरित करता है। वे यह समझने लगते हैं कि उनके व्यवहार के पीछे कौन–से कारण कार्य कर रहे हैं तथा उनके क्या परिणाम हो सकते हैं। इससे उनमें गहन चिंतन एवं आत्ममूल्यांकन की प्रवृत्ति विकसित होती है।

3. **नैतिकता एवं चरित्र निर्माण**

प्रतीत्य समुत्पाद का संबंध कर्मफल के सिद्धांत से है, जिसके अनुसार प्रत्येक कर्म का परिणाम अवश्य मिलता है। यह विचार विद्यार्थियों को नैतिक जीवन जीने के लिए

प्रेरित करता है। वे अपने आचरण में सत्य, अहिंसा, करुणा एवं सदाचार को अपनाने का प्रयास करते हैं, जिससे उनके चरित्र का समुचित विकास होता है।

4. **समस्या–समाधान क्षमता का विकास**

यह सिद्धांत विद्यार्थियों को यह सिखाता है कि किसी भी समस्या के पीछे कुछ कारण होते हैं। यदि उन कारणों की पहचान कर उन्हें दूर किया जाए, तो समस्या का समाधान संभव है। इस प्रकार यह दृष्टिकोण विद्यार्थियों में विश्लेषणात्मक सोच एवं समस्या–समाधान की क्षमता को विकसित करता है।

5. **कर्मप्रधान एवं उत्तरदायी दृष्टिकोण का विकास**

प्रतीत्य समुत्पाद यह प्रतिपादित करता है कि व्यक्ति अपने कर्मों के लिए स्वयं उत्तरदायी है। इससे विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता, उत्तरदायित्व एवं अनुशासन की भावना विकसित होती है। वे यह समझते हैं कि उनके वर्तमान कार्य ही उनके भविष्य का निर्माण करते हैं।

6. **समग्र व्यक्तित्व विकास**

यह सिद्धांत व्यक्ति के बौद्धिक, नैतिक एवं भावनात्मक सभी पक्षों के संतुलित विकास पर बल देता है। इससे शिक्षा केवल सूचना–प्रदाय तक सीमित न रहकर व्यक्तित्व के समग्र विकास का माध्यम बन जाती है।

निष्कर्ष

प्रतीत्य समुत्पाद बौद्ध दर्शन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण एवं मूलभूत सिद्धांत है, जो मानव जीवन के दुःखों की व्याख्या एवं उनके समाधान का तार्किक और वैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करता है। यह सिद्धांत स्पष्ट करता है कि जीवन में घटित प्रत्येक घटना कारणदृ कार्य संबंधों से जुड़ी होती है तथा अज्ञान और तृष्णा ही दुःख के मूल कारण हैं।

दार्शनिक दृष्टि से यह सिद्धांत यथार्थवाद, मध्यम मार्ग एवं शून्यवाद की आधारशिला प्रस्तुत करता है, जबकि शैक्षिक दृष्टि से यह शिक्षा को तार्किक, वैज्ञानिक, नैतिक एवं जीवनोपयोगी बनाता है। यह विद्यार्थियों में चिंतनशीलता, आत्मविश्लेषण, नैतिकता तथा उत्तरदायित्व की भावना का विकास करता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि प्रतीत्य समुत्पाद केवल एक दार्शनिक सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह एक जीवन–दृष्टि है, जो आधुनिक शिक्षा प्रणाली के लिए भी अत्यंत प्रासंगिक है। वर्तमान समय में, जब शिक्षा को मूल्यपरक एवं व्यवहारिक बनाने की आवश्यकता है, तब यह सिद्धांत शिक्षणदृअधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी, सार्थक एवं मानवीय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ

1. त्रिपिटक – बौद्ध धर्म के मूल ग्रंथ।
2. मज्झिम निकाय – पाली साहित्य का प्रमुख स्रोत।
3. संयुक्त निकाय – बौद्ध उपदेशों का संग्रह।
4. दीघ निकाय – दीर्घ उपदेशों का संकलन।
5. अभिधर्म कोश – वसुबंधु कृत।
6. नागार्जुन – माध्यमिक कारिका ।
7. बुद्धघोष – विशुद्धिमग्ग
8. गौतम बुद्ध – बौद्ध धर्म के प्रवर्तक एवं उपदेशक।
9. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन – भारतीय दर्शन।
10. डॉ. एस.एन. दासगुप्ता – History of Indian Philosophy।